मनुष्य के जीवन में मुझे आनंद की अपार संभावना दिखाई देती है। मुझे दिखाई देता है कि मनुष्य एक अपरिसीम आनंद की अनंत सत्ता का भागीदार बन सकता है। एक अर्थ में हम एक अमृत राज्य के सदस्य हैं। लेकिन इसका बोध, इसका ज्ञान, इसकी ठीक स्मृति हमें नहीं है। मनुष्य के आंतरिक जीवन में कितने आनंद की, कितनी शांन्ति की संभावना है, कितने नए आकाश के प्रकाश खुल सकते हैं इसका हमें कोई बोध नहीं है। लेकिन इस जमीन पर हमेशा हर सदी में कुछ लोग हुए जिनका शरीर हमारे जैसा था, जिनकी नसों में हमारे जैसा खून बहता था, जिनकी हमारे जैसी कमजोरियाँ थीं, हमारे जैसी वासनाएँ थीं और जिन्होंने जीवन के प्रांरम्भ में हमारे जैसे ही दुःख और पीड़ा अनुभव की, लेकिन एक दिन वे एक नए लोक में जाग गए और एक दिन उन्होंने जाना कि यह सारा दुःख व्यर्थ था। एक दिन उन्होंने देखा कि यह सारी पीड़ा अपने हाथ से पैदा की गई थी। एक दिन उनकी आँखों में यह सत्य साफ़ हो गया कि वह दरिद्र अपने हाथ से बने थे, अन्यथा सम्राट होने की क्षमता उनकी थी। ऐसे चमकते हुए लोगों से इतिहास भरा है। प्रत्येक सदी में ऐसे कुछ लोग, ठीक हम जैसे लोग एक भिन्न क्षमता के धनी हो गए थे।

मुझे दिखाई पड़ता है जो एक मनुष्य कर सका है वह प्रत्येक दूसरा मनुष्य कर सकता है। जो एक कमजोर और अँधेरे से भरे मनुष्य के भीतर प्रकाश का दिया जल सका है, वह हर दूसरे मनुष्य के भीतर भी जल सकता है। थोड़े से प्रयास, थोड़े से उस और मुड़ने की जरुरत है और हम जो अँधेरे में खड़े हैं, वे सूरज के सामने खड़े हो सकते हैं।

इस संबंध में यह भी मुझे प्रतीत होना बहुत स्पष्ट हो गया है कि यह बात कठिन नहीं है, यह अनंत-आनंद को उपलब्ध करना कठिन नहीं है। हमने उस तरफ ध्यान नहीं दिया केवल इतनी सी बात है। और कोई कठिनाई नहीं है कि जो महावीर के जीवन में संभव हुआ, जो बुद्ध के जीवन में संभव हुआ, जो जीसस क्राइस्ट के जीवन में संभव हुआ, और जो हजारों लोग उनके पीछे अनुगमन किये और ठीक इसी शरीर और इसी जीवन में कुछ अलौकिक से संयुक्त हो गए; कुछ डिवाईन, कुछ दिव्य अनुभूति उन्हें उपलब्ध हो गई, वह हममें से प्रत्येक की हो सकती है।

मैं कोई उपदेष्टा नही हूँ और मेरा किसी संप्रदाय से संबंध नहीं है। लेकिन एक बात मुझे इतनी साफ़ दिखाई देने लगी है कि मेरा मन होता है की उस अनुभूति में जितने अधिक लोगों को मैं साझेदार बना सकूँ उतना अच्छा है। वह बात मुझे यह दिखाई देनी शुरू हुई है--एक छोटा सा प्रयोग, मन शांत करने का एक छोटा सा प्रयोग, मन से मुक्त होने का एक छोटा सा प्रयोग, मन की लहरों को शांत कर देने का प्रयोग, आपके जीवन में क्रांति ला सकता है। आप कुछ से कुछ हो जा सकते हैं। और फिर मेरा कहना यह भी है यह प्रयोग बेशर्त है। इसकी कोई बहुत शर्तें नहीं हैं, जिनको आपको पूरा करना पड़े। आप जैसे भी हैं जहाँ भी हैं जैसी भी परिस्थिति में हों, आप अपने भीतर के स्वरुप से संबंधित हो सकते हैं। जो हमारे भीतर मौजूद है, जिसकी सत्ता मेरी निरंतर प्रत्येक सांस में है, जिससे मैं एक पल भी दूर नहीं हो सकता, उससे संयुक्त हो जाने की घटना कठिन नहीं हो सकती है। इस संयुक्त होने के प्रयोग को मैं ध्यान कहता हूँ।

ध्यान से मेरा अर्थ है उस आंतरिक जीवन सत्य के स्त्रोत से सम्बंधित हो जाना जिससे हम वियुक्त हो गए हैं। और, जिसके वियोग के कारण दुःख है। जिसके वियोग के कारण पीड़ा है। जिसके वियोग के कारण हमारा सारा जीवन बोझ से और भार से दब जाता है। और जिसके वियोग के कारण हम जीवन भर ऐसी चीजों को

खोजते रहते हैं, इकट्ठी करके रखते हैं जिनका कोई मूल्य नहीं है। और जो हमारे जीवन के साथ मृत्यु तक और उसके पार जा नहीं सकतीं।

सिक्खों के गुरु थे नानक। उनके जीवन की एक घटना मुझे स्मरण है। वह एक दिन सुबह लाहौर में ठहरे थे। उनका एक प्रेमी भक्त था जो अनेक वर्षों से उन्हें प्रेम करता रहा और भक्ति देता रहा। वह सुबह-सुबह सूरज के उठने के साथ ही उनसे मिलने आया था। नानक ने उनसे कहा--एक छोटा सा काम है। मैं चाहता हूँ तुम मेरे लिए कर दो।

वह बोले--मैं तो सदा कोई भी काम हो, उसे करने के लिए उत्सुक रहा हूँ। तथा हमेशा यह आकांक्षा रही कि आप कुछ, कुछ कहें और मैं पूरा कर सकूं और कृतार्थ हो जाऊँ।

नानक ने कहा--बहुत ही छोटा काम है और अपने वस्त्रों में से कपड़ा सीने की एक सुई निकाली और अपने प्रेमी भक्त से कहा कि इस सुई को रख लो और मरने के बाद मुझे वापिस लौटा देना। जब मैं मर जाऊँ और जब तुम भी मर जाओ तो मरने के बाद सुई को वापिस कर देना।

जिसको यह काम दिया था वह बहुत समृद्ध था, उसके पास कोई भी कमी न थी, उसके पास सम्पत्ति का विराट भण्डार था। शक्ति बहुत थी, मान-सम्मान बहुत था। लेकिन भीतर थोड़ा घबराया कि सुई को मृत्यु के बाद ले जाना संभव तो होगा नहीं, लेकिन नानक के मुँह पर न बोलना भी कठिन पड़ा। सुई को घर ले के गया। रात भर सो नहीं सका, रात भर सोचा कि मृत्यु के पार इस छोटी सी सुई को ले कैसे जाऊगाँ? सुबह वापिस लौटा और नानक को सुई लौटा दी और कहा कि मेरे प्रभु, मैं दुखी हूँ। इस काम को करना मेरी शक्ति के बाहर है। यह सुई मैं मृत्यु के पार नहीं ले जा सकता।

नानक ने पूछा की तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुम ले जा सकोगे? फिर जो जीवन भर तुमने इकठ्ठा किया, उसमें से क्या तुम्हारे साथ होगा? क्या तुम्हारा पाथेय बनेगा उस अनंत यात्रा में? इस छोटे से जीवन को अपनी यात्रा मत समझना। हम एक लम्बी यात्रा के यात्री हैं, जो इस जीवन भर के पीछे भी और आगे भी फैलती चली गई है।

उस अनंत यात्रा पर जो काम आ सके वह हमारी सम्पत्ति है। उस अनंत यात्रा पर जो मेरा साथ दे सके वह मेरा धन है। उस अनंत यात्रा पर जो मेरा हो, जो छूट न सके जो मुझसे वियुक्त न हो सके जो मुझे से पृथक न किया जा सके, वह मेरी कमाई कही जा सकती है। इस शाश्वत संपत्ति के लिए ही सारे धर्मों के सत्गुरुओं ने प्रयास किया है।

महावीर ने इस तरह की सच्चाई को और जीवन क्रांति को सम्पदा कहा है जो अक्षुण्ण रूप में भी मृत्यु के पार हमारे साथ जा सकती है। ऐसी क्या संपत्ति है जो मृत्यु के बाद भी मेरे साथ होगी? ऐसा कोई भी प्रयास और ऐसी कोई भी उपलब्धि जो मैं बाह्य जीवन में कर रहा हूँ, मेरे साथ नहीं जा सकती है। अकेला वह परिवर्तन जो मेरे स्वरुप में हो, जो मेरे अंतस में हो, जो मुझमें हो, जो मेरे केंद्र पर हो, वही मेरा साथी बन सकता है।

इसलिए मैंने धीरे-धीरे इस बात को इतना साफ़ देखना शुरू किया कि धर्म की सच्चाई एक ही बात से संबंधित है, जो आपके साथ मृत्यु के बाद जा सके, धर्म उसकी उपलब्धि का प्रयोग है, और कुछ नहीं। समस्त जीवन हम जो भी इकठ्ठा करते हैं, वह मृत्यु के इस पार रहेगा, मृत्यु के पार भी जो जा सके, धर्म उससे संबंधित है। और मेरा देखना है ध्यान के अतिरिक्त आपके धर्म के नाम पर बनाये गए मंदिर, धर्म के नाम पर बनाई हुई धर्मशालाएँ और धर्म के नाम पर की गई अर्चना और प्रार्थना और प्रकाशित किये गए ग्रंथ और अध्ययन और मनन वह कोई भी नहीं जा सकता है। क्योंकि मूलतः उसका धर्म से कोई संबंध नहीं है।

अपने स्वरुप में अशांति को विसर्जित करने का, अपने स्वरुप में दुःख और पीड़ा को विसर्जित करने का नाम ही ध्यान है।

आडियो रिकार्डिंग में अंतराल

अशांति और दुःख जब दूर हट जाते हैं, और विकार और चिंता विसर्जित हो गए तो वह आनंद का, शांति का केंद्र और जो प्रकाश की शिखा जलेगी, वह मृत्यु के पार लपटों के साथ आपके साथ जाने को है। केवल वही साथ जाने को है। और जो साथ जाने को है वही सत्य है।

जिसे मृत्यु की लपटें न जला सकें केवल वही सत्य है जिसे मृत्यु की अँधेरी गली न बुझा सके, सत्य में वही प्रकाश है। जिसे मृत्यु आपसे न छीन सके केवल वही संपत्ति है। और यह संपत्ति ध्यान के अतिरिक्त और किसी प्रयोग से मिलती नहीं। ध्यान हमें हमारे केंद्र से जोड़ देता है। और यह आश्चर्य की बात है जो आनंद जीवन में बाहर भटककर जन्मों-जन्मों में नहीं पाया जा सका, वह आनंद एक क्षण में अगर अपने केन्द्र से जुड़ जाएं तो अखंडित रूप से हमारा हो जाता है। यह मैं आपसे कहुँ--आज तक इस जमीन पर करोड़-करोड़, अरब-अरब लोग रहे हैं। हम पहले निवासी नहीं हैं। इस भ्रांति में मत रहना कि हम पहली बार जमीन पर हैं। हमसे पहले अरबों लोग रहे हैं। और थोड़ी सी भी देखने को आँखें हो तो आप यह देख पाएंगे कि अरबों लोगों में से एक ने भी मनुष्य के इतिहास में यह नहीं कहा कि आनंद मुझे बाहर मिल सका है। आज तक पूरे मनुष्य के इतिहास में एक मनुष्य ने भी यह नहीं कहा है कि मैंने जो बाहर के जीवन में पाया है, वहां आनंद मिला है।

अरबों लोग बाहर की व्यथा में जीवन को खोज कर लिप्त हो गए, समाप्तः हो गए, टूट गए और मिट्टी में मिल गए हैं। और बाहर एक भी आदमी को आनंद घटा हो--इस भ्रांति में रहने वाला, अज्ञान में है। कोई भी अपवाद नहीं हो सकता है। जो सबके साथ हुआ है वह मेरे साथ और सबके साथ होने को है।

लेकिन दूसरा एक सत्य है जो इतना ही स्पष्ट है। कुछ लोग हुए हैं और उनकी संख्या भी कम नहीं है, जिन्होंने कहा कि हमने भीतर झाँका और दरिद्रता मिट गई। हमने भीतर झाँका और हम दुःख के पार हो गए। हमने भीतर झाँका और मृत्यु समाप्त हो गई। हम अमृत के राज्य के सदस्य हो गए। ऐसे लोग भी हुए हैं और कोई कारण नहीं है कि हम दूसरे वर्ग में सम्मिलित क्यों न हो जायें!

तो मैं इसके लिए आमंत्रण दे रहा हूँ। आप दूसरे वर्ग में सम्मिलित हो सकते हैं। और पूरी योग्यता और पात्रता प्रत्येक में है। पूरी शक्ति और क्षमता प्रत्येक में है। हम उपयोग न करें तो बात दूसरी है। उपयोग करने भर की बात है--अपनी क्षमता और शक्ति की, अपनी सम्भावना की। और नये क्षितिज, आनंद और प्रकाश के द्वार खुल सकते हैं।

तो आज की सुबह, विशिष्ट ध्यान के प्रयोग के लिए रखी है। थोड़ी सी बातें--ध्यान से मेरा क्या प्रयोजन है? और ध्यान की मेरी क्या विधि है? और मेरा मानना है कि ध्यान की विधि अगर ठीक से समझ लें तो पहले दिन ही कुछ घटना घट सकती है। मेरा यह मानना नहीं है कि वर्षों प्रयास किये जाएं, मेरा यह मानना है कि यदि विधि ठीक है, तो एक ही क्षण में क्रांति हो सकती है।

महावीर ने कहा है, अगर हम आत्म-दृष्टा बन सकें, तो एक क्षण में मुक्ति हो सकती है। और आत्म-दृष्टा कैसे बन सकते हैं? इस प्रयोग को आज सुबह मैं आपको समझाता हूँ। इसके पूर्व कि मैं ध्यान में आपको बिठाऊँ मैं यह चाहूंगा कि जो लोग भी बैठते हैं, वे कम से कम तीन दिन नियमित आ के बैठें। और दूसरी बात बैठते समय अपनी तरफ से ध्यान के सम्बंध में जो भी जानते हों, कृपया मैं जो बता रहा हूँ, उसको उससे न जोड़ें। जो भी

विधि मैं कह रहा हूँ, उसे सुस्पष्ट रूप से जैसा मैं कह रहा हूँ, वैसा ही करें। आप जो भी जानते हों, ध्यान के संबंध में, उसको उसमें संयुक्त न करें। ध्यान के संबंध में जरा सी भी बात और किसी विधि की उपयोग करें तो वह विकृत हो जाती है। सबसे पहले तो यह स्मरण रखें आप जो भी जानते हों, कुछ न कुछ प्रत्येक जानता है, ध्यान के सम्बन्ध में कुछ पढ़ा होगा, कुछ किया होगा, कुछ सुना होगा, उसे कृपया मैं जो कह रहा हूँ उसके साथ नहीं जोड़ना है।

दो-तीन छोटी सी बातें हैं, वे आपको समझा दूँ, और फिर मैं आपको बिठाऊं। क्यूंकि मेरा मानना है समझाने से बहुत कुछ होने का नहीं है। आपको दिखने लगे तो कुछ हो सकता है। इसलिए मेरा जो पिछले 6 महीने से, वर्ष भर से समझाने में कम, करवाने में ज्यादा जोर है। समझा मैं देता हूँ थोड़ा, ताकि भूमिका बन जाये, फिर करने की बात है, वह 15 मिनट में बैठ कर करेंगे। मेरा मानना है... और मानना ही नहीं है क्यूंकि मैंने सैकड़ों लोगों पर प्रयोग किये, और सैकड़ों लोगो में परिवर्तन हुआ है। इसलिए कोई वजह नहीं कि आपको भी पहले दिन में कुछ परिवर्तन क्यों नहीं मालूम पड़े! परिवर्तन मालूम पड़ सकता है। लेकिन जितने मुक्त मन से मेरी बात को आप मान के अपने को ढीला कर देंगे और अपनी ओर से कुछ न जोड़ेंगे, और थोड़ी देर के लिए अपने को भूल ही जायेंगे, ध्यान की जो विधि मैं बता रहा हूँ अगर उसी में रह जायेंगे, तो उतने ही जल्दी परिवर्तन होते जायेंगे।

तीन बातें ध्यान के संबंध में जरुरी हैं। एक बात--ध्यान का अर्थ चेतना को केन्द्र की ओर वापिस ले चलना है। चेतना को केन्द्र की और वापिस ले चलने में दो स्थान हैं जहाँ रुकावट होती है। उन दोनों स्थानों को ठीक से समझ लेना है। जिससे रुकावट खत्म हो जाती है, और भीतर प्रवेश आसान हो जाता है। पहला स्थान शरीर है। मेरी विधि में शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ कर बैठना होता है। अभी जो आपको बिठाऊँगा तो आपको अपने शरीर को इस तरह ढीला छोड़ के बैठ जाना है जैसे आपका शरीर मुर्दा हो गया हो। जैसे शरीर में कोई प्राण ही न हो। शरीर में कोई कड़कपन, कोई टेंशन, कोई तनाव नहीं रखना है। इसलिए किसी विशिष्ट आसन में भी नहीं बैठना है। जो सहज हो, उसी को मैं आसन कहता हूँ। बिल्कुल आसानी से बैठ जाना है। कोई विशेष आसन नहीं लगाना, कोई रीढ़ को सीधा, कोई कड़ा करने की जरुरत नहीं। बिल्कुल ढीला बैठ जाना है। सिर झुक जाए, गर्दन झुक जाये शरीर झुक जाये, तो झुक जाने देना। इतना ही ध्यान रखना है रीढ़ अगर झुकती हो तो थोड़ा पीछे को झुका के बैठना है। क्यूंकि शरीर आपका जब पूरा शिथिल होगा तो अनेक बार शरीर गिर जाता है। दो-तीन दिन के प्रयोग में तो 80 प्रतिशत लोगों का शरीर गिर जाता है। इसलिए अगर आगे शरीर झुक कर गिर जाये, तो श्वास जोर से होने लगती है, और फिर तकलीफ होती है। इसलिए पीठ को थोड़ा सा पीछे को झुका के बैठेंगे ताकि अगर शरीर गिरता है तो पीछे गिर जाये। दूसरा, प्रत्येक को दूसरे से दूरी से बैठना है, पीछे थोड़ी जगह बना के बैठना है, ताकि अगर शरीर पीछे गिर जाए तो किसी के ऊपर न गिरे। हॉल तो बहुत बड़ा है। दूर-दूर बैठेंगे तो आसानी होगी। अगर शरीर गिरता है तो उसको रोकना नहीं, यह स्मरण रखें। अगर शरीर झुकने लगे और गिरने लगे तो अपनी तरफ से उसे रोकना नहीं, उसे गिर जाने देना है। कोई नुकसान उसके गिर जाने से नहीं होता। लेकिन अगर उसे रोक दिया, तो चेतना शरीर पर ही रुक जाती है। शरीर की परिपूर्ण शिथिलता, शरीर की परिपूर्ण रिलैक्स स्थिति ध्यान में जाने की अनिवार्य शर्त है। जितना शरीर शिथिल हो जायेगा, चेतना उतनी ही पीछे हट जाती है। यही कारण है ध्यान के प्रयोग से साधक उस स्थिति में से रोज गुजरने लगते हैं, जिसमें से मृत्यु में सामान्य व्यक्ति को गुजरना होता है। उनकी चेतना मृत्यु की प्रक्रिया से रोज गुजरने लगती है। उस समय मृत्यु से परिचय हो जाता है।

आडियो रिकार्डिंग में अंतराल

आपको मेरे साथ अनुभव करते जाना है कि रिलैक्शेसन हो रहा है। और जैसे-जैसे आप अनुभव करते जायेंगे भीतर टेंशन और तनाव छूटता जा रहा है। और हाथ-पैर हवा की तरह हलके और शांत होते जा रहे हैं।

आडियो रिकार्डिंग में अंतराल

जैसे शरीर बिल्कुल नहीं है। और इस बीच अगर शरीर गिर जाये तो चुपचाप गिर जाने देना। आँख आपको आहिस्ता से बंद करनी है, जब ध्यान करने के लिए बिठाऊँ। उसको जोर से नहीं खींचना है, यह छोटी छोटी बातें हैं लेकिन इनसे बहुत अंतर पड़ता है। आँख आहिस्ता से बंद करने में जैसे पलक भारी हो के जम जाती है। जोर न हो पलकों पर बंद करने का। पलकों को गिरा के छोड़ देना है। हल्कापन वहां भी। भारीपन न आये। आँख को धीरे से बंद कर देना। दो मिनट मैं आपको सुझाव दूंगा कि आपका शरीर शिथिल हो रहा है। उसे शांत मेरे साथ अनुभव करना है। जितनी परिपूर्णता से आप अनुभव करेंगे उतनी शीघ्रता से परिणाम होंगे। जो लोग एकदम उसे मान करके चलेंगे उनको पहले दिन ही परिणाम मिलेंगे।

दूसरे चरण में जब आपका शरीर दो मिनट में स्थिर हो जायेगा, ढीला हो जायेगा, और चेतना उस पर से अपने को पीछे खींच लेंगी, आप पाएंगे की श्वास ढीली हो जाएगी, शांत हो जाएगी। शरीर के शिथिल होते ही श्वास शांत हो जाती है और रिद्मिक हो जाती है, लययुक्त हो जाती है।

यह जानकार शायद आपको आश्चर्य हो, श्वास का मन के साथ गहरा संबंध है। अगर मन उत्तेजित हो तो श्वास उत्तेजित हो जाती है। अगर मन में क्रोध हो तो श्वास उत्तेजित हो जाती है, अगर मन में कामवासना हो तो श्वास उत्तेजित हो जाती है। मैं मानता हूँ प्रत्येक को अनुभव होगा कि जब भी आपका मन उत्तेजित होगा श्वास उत्तेजित हो जाएगी और झटके से तेज हो जाएगी।

जब हम बच्चों पर प्रयोग करते हैं--हम बच्चों को स्कूल में कहते हैं कि क्रोध मत करो, बच्चों को यह सिखाना चाहिए कि जब क्रोध आये तो श्वास को शिथिल करो--यह ज्यादा वैज्ञानिक बात है। किसी को यह कहना की क्रोध मत करो, कोई अर्थ की बात नहीं है। क्रोध कोई करता नहीं, वह तो हो जाता है बिल्कुल मूर्छित स्थिति में।

वे जापान में यह शिक्षा देते हैं बच्चों को जब क्रोध आये तो तुम श्वास को शिथिल करना। और यह आश्चर्य कि बात है शिथिल श्वास के साथ क्रोध नहीं किया जा सकता है। इसका प्रयोग आप करके देख सकते हैं। शिथिल श्वास के साथ क्रोध असंभव है। क्रोध अगर करना है तो श्वास का तेज होना अनिवार्य है। अगर श्वास को शिथिल कर दें तो क्रोध मर जाता है। जैसे ही शरीर स्थिर होगा श्वास स्थिर हो जाऐगी। श्वास के स्थिर होने से मन स्थिर होने लगता है।

गौतम बुद्ध ने तो अपने सारे प्रयोग श्वास पर ही निर्भर किये थे। उन्होंने उसे अनापानसति योग का नाम दिया। श्वास के आने-जाने को केवल देखते रहने मात्र से बुद्ध कहते थे कि परिपूर्ण प्रज्ञा उत्पन्न हो सकती है। बात बहुत सरल दिखती है, और सरल सच में है, और प्रयोग करने के बाद आश्चर्यजनक परिणाम आते हैं।

जब आपकी श्वास स्थिर होने लगे तब मैं आपको दो मिनट तक और सुझाव दूंगा कि आपकी श्वास शांत होती जा रही है। उस समय आपको श्वास को शांत करना नहीं है। इतना स्मरण रखें, अगर आपने चेष्टा करके श्वास को धीमा किया तो श्वास तेज हो जाएगी। आपको कोई चेष्टा नहीं करनी है। ध्यान निश्चेष्ठा में जाने का नाम है। आपको चुपचाप देखते रहना है, मैं कहूँगा श्वास शांत हो रही है, आपको श्वास को देखते रहना है। और

आप पाएंगे देखते-देखते श्वास शांत होती जा रही है। जैसे-जैसे श्वास शांत होती जाएगी वैसे-वैसे मन शांत होते जायेगा। यह बहुत आश्चर्य की बात है कि अगर श्वास टूट जाये तो मन टूट जाता है। अगर आप एक सेकंड को श्वास रोक लें, वैसे ही आप पाएंगे कि आपके विचार झटके से रुक गए। एक सेकंड को श्वास रोक कर देखें। यहाँ श्वास रुकेगी, भीतर विचार की प्रक्रिया टूट जाएगी। ये दोनों अंतर्सम्बंधित है--यहाँ विचार वहाँ श्वास, बंधे हुए हैं। एक ही चीज के दो छोर हैं। इसलिए शांत श्वास के परिणाम में विचार शांत होने लगेंगे।

दो मिनट तक मैं श्वास के लिए सुझाव दूंगा। अगर मेरी बात को ठीक से मान के आप चले तो आप पाएंगे कि शरीर के शिथिल होती ही, श्वास के शांत होते ही विचार शांत हो जायेंगे। फिर भी अगर इक्के-दुक्के विचार घूमते-फिरते रह गए तो मैं दो मिनट तक मन शून्य हो रहा है, इस पर सुझाव दूंगा। वह चुपचाप आपको सुनते रहना है। और आंतरिक रूप से मानते जाना है कि मन शून्य हो रहा है। दो मिनट के बाद--मतलब कुल 6 मिनट मैंने सुझाव दिए--दो मिनट के बाद मैं कहूंगा कि 10 मिनट के लिए मन शून्य हो गया। पूरी सम्भावना है की 10 मिनट के लिए आप एक शून्य में गिर जायें। इसी शून्य की परिपूर्णता का नाम ध्यान है। न कोई विचार होगा, न कोई वासना होगी, न कोई विकार होगा। परिपूर्ण--पूर्ण सन्नाटा हो जायेगा।

इस शून्य की जब परिपूर्णता आ जाती है, तब इसमें कोई विचार नहीं आता बीच में भटक कर। और बहुत आसान है, एक महीने के प्रयोग में हो जाता है। एक दिन के प्रयोग में भी हो जाता है। वह हो जाना इस बात पर निर्भर करता है कि आप कितनी सरलता से बात को मान के चलते हैं। यही शून्य फिर धीरे-धीरे विकसित होने लगता है और 24 घंटे पर फैलाया जा सकता है। जिस दिन पूरे व्यक्तित्व में 24 घंटे के लिए भीतर शून्य का एक केंद्र बन जाये, उस दिन आपके जीवन में एक अद्भुत, एक अलौकिक घटना घट जाती है। इस शून्य और शांत स्थिति में आत्मबोध प्रांरभ होता है। मैं कौन हूँ? इसके उत्तर आने शुरू होते हैं। आत्मिक जीवन की झलक और किरण का अनुभव होना शुरू होता है। शून्य के माध्यम से मनुष्य पूर्ण होता है। और शून्य के इस द्वार से ही मनुष्य प्रभु से संयुक्त होता है, दिव्य से संयुक्त होता है। यह शून्य छोटे से प्रयोग से विकसित किया जा सकता है।

इतना ध्यान रखें कि यह प्रयोग कोई विशिष्ट क्रिया नहीं है। अगर ठीक से समझें तो एक तरह की अक्रिया है। एक तरह से क्रिया को छोड़ना है। समस्त क्रियाओं को--शरीर की, मन की, श्वास की--छोड़कर हम अपने भीतर पहुंच जाते हैं। और जहां केंद्र है, वहां के दर्शन को उपलब्ध होते हैं।

ऐसे व्यक्ति को जो शून्य के द्वारा केंद्र के स्वरूप को देख पाता है, आत्म-दृष्टा कहते हैं। महावीर ने एक वचन कहा हैः आत्म-दृष्टा के लिए किसी उपदेश की आवश्यकता नहीं है। मैंने इस वचन को पढ़ा... मैं तो हैरान हो गया इतना क्रांतिकारी वचन मैंने कहीं पढ़ा नहीं है! महावीर का एक वचन हैः आत्म-दृष्टा को, पश्यक को, जो अपने को देखता है उसको कोई उपदेश की आवश्यकता नहीं है। उसके लिए सब उपदेश व्यर्थ हैं--यह एक पंक्ति मूल धर्म को इंगित करती है। जो आत्म-दृष्टा बन गया उस पर सब उपदेश व्यर्थ हैं, कोई उपदेश काम का नहीं है। उस आत्म-दृष्टा होने से, श्रेष्ठतम अपने से निकल आता है--आचरण, व्यवहार सब अपने से निकल आता है। आत्म-दृष्टा हो जाना जीवन में सब कुछ पा लेना है।

ये थोड़ी सी बात मैंने समझाईं। स्मरणीय बहुत थोड़ी सी बात है उसमें। शरीर को शिथिल छोड़ देना है, आँख को शिथिल छोड़ देना है। फिर जो मैं सुझाव दूंगा उन सुझावों को सहज भाव से मानते चले जाना है। जितनी परिपूर्णता से आप अपने अहंकार को और 'मैं' को छोड़कर और व्यक्तित्व को भूलकर इस प्रक्रिया से गुजरेंगे, उतने आप हैरान हो जायेंगे। मैं आपको कह नहीं सकता, क्या हो सकता है! लेकिन आपको अनुभव होगा की बहुत-कुछ हो सकता है।

अब मैं चाहूँगा, थोड़े-थोड़े दूर बैठ जायें। एक-दूसरे को छूना नहीं है, और अगर शरीर गिर जाये तो उसके लिए स्थान कर लेना है।